Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| *Website:* https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

Original Article

वृद्धावस्था में आर्थिक परावलंबन और मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएँ : एक समीक्षात्मक विमर्श

सुनीता देवी

स्नातक, (सेमेस्टर सात) गृहविज्ञान,

एस. टी. डी. जी. कॉलेज, गौतम नगरी, शाहपुर

Manuscript ID: yrj-150302

ISSN: 2277-7911
Impact Factor – 7.025

Volume 15
Issue 3
July-Aug-Sept.- 2026
Pp. 11-26

Submitted: 7 July 2026
Revised: 20 July 2026
Accepted: 1 Aug. 2026
Published: 10 Aug. 2026

Corresponding Author:
सुनीता देवी

Quick Response Code:

Web. https://yra.ijaar.co.in/

DOI:
10.5281/zenodo.22722263

DOI Link:
https://doi.org/10.5281/zenodo.22722263

सारांश:

भारत की वृद्ध जनसंख्या जिस गति से बढ़ रही है, उस अनुपात में उसकी आर्थिक सुरक्षा नहीं बढ़ी। प्रस्तुत शोध-पत्र द्वितीयक स्रोतों के आधार पर यह परखता है कि वृद्धजनों की आर्थिक निर्भरता तथा उनके मानसिक स्वास्थ्य के बीच किस प्रकार का सम्बन्ध बनता है, और इस सम्बन्ध में परिवार की भूमिका क्या रह गई है। विश्लेषण का आधार मुख्यतः भारत में वृद्धावस्था का अनुदैर्ध्य अध्ययन (LASI, प्रथम तरंग), इंडिया एजिंग रिपोर्ट 2023 तथा इन्हीं प्रदत्त पर आधारित प्रकाशित शोध-पत्र रहे हैं। उपलब्ध साक्ष्य तीन बातें स्पष्ट करते हैं। पहली, आर्थिक निर्भरता भारतीय वृद्धावस्था का अपवाद नहीं बल्कि सामान्य नियम है; संगठित क्षेत्र की पेंशन बहुत छोटे अंश तक सीमित है और सार्वजनिक वृद्धावस्था पेंशन की राशि निर्वाह-योग्य नहीं है। दूसरी, वृद्धजनों में अवसाद की व्यापकता चिन्ताजनक स्तर पर है और स्त्रियों में यह पुरुषों से लगातार अधिक पाई गई है (Ansari et al., 2022)। तीसरी, इन दोनों के बीच का सम्बन्ध एकपक्षीय नहीं है, क्योंकि निर्भरता केवल संसाधनों की कमी नहीं बल्कि घर के भीतर निर्णय-अधिकार के क्षरण के रूप में अनुभव होती है, और यही क्षरण मानसिक स्वास्थ्य पर सीधे प्रभाव डालता है। साहित्य की समीक्षा से यह भी सामने आता है कि संयुक्त परिवार का सहारा अब उतना निश्चित नहीं रहा जितना नीतिगत विमर्श मान लेता है, क्योंकि सन्तानों से माता-पिता की ओर होने वाला वित्तीय अन्तरण सीमित संख्या में ही होता है (Nagargoje et al., 2023)। निष्कर्ष यह है कि वृद्धजनों के मानसिक स्वास्थ्य को केवल चिकित्सा का विषय मानना अपर्याप्त है; जब तक उनके नाम पर एक नियमित एवं पर्याप्त आय सुनिश्चित नहीं होती, तब तक मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी हस्तक्षेप कारण के स्थान पर लक्षण का ही उपचार करते रहेंगे।

मुख्य शब्द: वृद्धजन; आर्थिक निर्भरता; मानसिक स्वास्थ्य; अवसाद; वृद्धावस्था पेंशन; अन्तर-पीढ़ीगत अन्तरण; LASI; द्वितीयक विश्लेषण; गृह विज्ञान।

Creative Commons

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), *which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.*

OPEN ACCESS

How to cite this article:

सुनीता देवी (2026). वृद्धावस्था में आर्थिक परावलंबन और मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएँ : एक समीक्षात्मक विमर्श. Young Researcher, 15(3), 11–26. https://doi.org/10.5281/zenodo.22722263

प्रस्तावना:

वृद्धावस्था को भारतीय समाज में प्रायः आदर के साथ देखा जाता रहा है, किन्तु आदर और सुरक्षा दो अलग वस्तुएँ हैं। पिछले कुछ दशकों में जीवन-प्रत्याशा बढ़ी है, चिकित्सा सुविधाएँ फैली हैं और मृत्यु-दर घटी है; इसका परिणाम यह हुआ कि लोग अधिक जी रहे हैं, पर यह प्रश्न अनुत्तरित रह गया कि वे इन बढ़े हुए वर्षों को किस साधन के बल पर जिएँगे। इंडिया एजिंग रिपोर्ट 2023 के अनुसार सन् 2022 में साठ वर्ष एवं उससे अधिक आयु के व्यक्तियों की संख्या लगभग 14.9 करोड़ थी, जो कुल जनसंख्या का लगभग 10.5 प्रतिशत बैठती है, और यह अनुपात सन् 2050 तक बढ़कर लगभग 20.8 प्रतिशत, अर्थात् लगभग 34.7 करोड़ व्यक्तियों तक पहुँच जाएगा (UNFPA & IIPS, 2023)। इसी रिपोर्ट का अनुमान है कि 2046 तक देश में वृद्धों की संख्या बच्चों से अधिक हो जाएगी।

इन आँकड़ों का महत्त्व केवल संख्या में नहीं है। अस्सी वर्ष से ऊपर की जनसंख्या इसी अवधि में लगभग 280 प्रतिशत बढ़ने वाली है, और यह सबसे वृद्ध समूह मुख्यतः स्त्रियों का, विधवाओं का तथा आश्रितों का होगा। जिस देश में नब्बे प्रतिशत से अधिक श्रमशक्ति असंगठित क्षेत्र में काम करती है, वहाँ इसका सीधा अर्थ यह है कि आने वाले दशकों में करोड़ों लोग बिना किसी सेवानिवृत्ति-लाभ के, बिना भविष्य निधि के और प्रायः बिना किसी बचत के वृद्धावस्था में प्रवेश करेंगे। यहीं से वह प्रश्न उठता है जिस पर यह शोध-पत्र केन्द्रित है।

भारत में वृद्धजनों के लिए नीतिगत ढाँचा पूरी तरह अनुपस्थित नहीं रहा है। वृद्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति सन् 1999 में आई, वृद्धजनों के स्वास्थ्य की देखभाल का राष्ट्रीय कार्यक्रम सन् 2010 में आरम्भ हुआ, और माता-पिता एवं वरिष्ठ नागरिक भरण-पोषण तथा कल्याण अधिनियम सन् 2007 में पारित हुआ, जिसने वृद्ध माता-पिता के भरण-पोषण को सन्तानों का विधिक दायित्व बना दिया (Government of India, 2007)। कागज पर यह ढाँचा प्रभावशाली दिखता है। कठिनाई क्रियान्वयन में है, और उससे भी अधिक उस मूल मान्यता में है जिस पर यह सारा ढाँचा टिका हुआ है, अर्थात् यह कि परिवार अपने वृद्धों का भरण-पोषण करेगा और राज्य की भूमिका केवल पूरक रहेगी। जब जनसांख्यिकी तथा पलायन दोनों तेजी से बदल रहे हों, तब इस मान्यता की जाँच आवश्यक हो जाती है।

एक और बात रेखांकित करने योग्य है। वृद्धावस्था पर होने वाले अधिकांश भारतीय अध्ययन या तो स्वास्थ्य-केन्द्रित हैं या जनसांख्यिकी-केन्द्रित, और उनमें आर्थिक पक्ष प्रायः पृष्ठभूमि के चर के रूप में आता है, विश्लेषण के केन्द्र में नहीं। दूसरी ओर आर्थिक अध्ययनों में मानसिक स्वास्थ्य प्रायः अनुपस्थित रहता है। गृह विज्ञान का अनुशासन इस रिक्ति को भरने की दृष्टि से विशेष स्थिति में है, क्योंकि पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन तथा मानव विकास, दोनों उसके अध्ययन-क्षेत्र में आते हैं। घर के भीतर संसाधन किस प्रकार बँटते हैं, निर्णय कौन लेता है, और इसका सदस्यों के कल्याण पर क्या प्रभाव पड़ता है, ये प्रश्न इसी अनुशासन के केन्द्रीय प्रश्न हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र इसी दृष्टि से विषय को उठाता है।

भारतीय सन्दर्भ में वृद्धजनों की आर्थिक स्थिति पर जो थोड़ा-बहुत लिखा गया है, वह प्रायः आय, सम्पत्ति

अथवा पेंशन-कवरेज तक सीमित रहा है, और मानसिक स्वास्थ्य पर लिखा गया साहित्य प्रायः रोग-निदान तथा उपचार की भाषा में रहा है। दोनों को एक साथ रखकर देखने का प्रयास तुलनात्मक रूप से कम हुआ है। यह पृथक्करण व्यावहारिक दृष्टि से महँगा पड़ता है, क्योंकि वृद्ध व्यक्ति के जीवन में ये दोनों बातें अलग-अलग घटित नहीं होतीं। जो व्यक्ति अपनी दवा के लिए भी पुत्र से पैसे माँगने पर विवश हो, उसके लिए आर्थिक निर्भरता कोई सांख्यिकीय श्रेणी नहीं, बल्कि प्रतिदिन दोहराया जाने वाला अनुभव है, और वह अनुभव उसकी आत्म-छवि तथा मनःस्थिति को उसी प्रकार गढ़ता है जिस प्रकार कोई दीर्घकालिक रोग गढ़ता है।

इस सम्बन्ध को समझने के लिए एक वैचारिक स्पष्टता आवश्यक है। सेन (1999) ने विकास को साधनों की उपलब्धता के स्थान पर व्यक्ति की कर्तृत्व-क्षमता के विस्तार के रूप में परिभाषित किया था। इस दृष्टि से देखें तो वृद्ध व्यक्ति की आर्थिक स्थिति का प्रश्न केवल यह नहीं है कि घर में कितना धन है, बल्कि यह है कि उस धन के विषय में निर्णय लेने में उसकी कितनी भागीदारी बची है। एक सम्पन्न परिवार का वृद्ध सदस्य भी, यदि उससे कोई आर्थिक निर्णय नहीं पूछा जाता, तो अपने ही घर में आश्रित की भाँति जी सकता है। नैदानिक जरा-विज्ञान में लिचटेनबर्ग एवं सहयोगियों (2015) ने ठीक इसी कारण वित्तीय निर्णय-क्षमता को केवल गणितीय योग्यता न मानकर उन परिस्थितिजन्य दबावों का भी परिणाम माना, जिनके अन्तर्गत निर्णय वास्तव में लिए जाते हैं।

प्रस्तुत शोध-पत्र किसी नए क्षेत्र-सर्वेक्षण पर आधारित नहीं है। इसका आधार वे राष्ट्रीय स्तर के प्रदत्त तथा प्रकाशित शोध हैं जो पिछले कुछ वर्षों में उपलब्ध हुए हैं, विशेषकर भारत में वृद्धावस्था का अनुदैर्घ्य अध्ययन, जिसने पहली बार साठ वर्ष से ऊपर की जनसंख्या का इतना विस्तृत चित्र प्रस्तुत किया। इन स्रोतों को एक साथ पढ़ने पर जो चित्र उभरता है वह अलग-अलग रिपोर्टों में बिखरा पड़ा है, और उसे एक तर्क-सूत्र में पिरोना ही इस शोध-पत्र का उद्देश्य है।

अध्ययन के उद्देश्य:

उपर्युक्त पृष्ठभूमि में इस अध्ययन के तीन उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं।

1. उपलब्ध राष्ट्रीय प्रदत्त के आधार पर भारतीय वृद्धजनों की आर्थिक निर्भरता के स्वरूप तथा विस्तार का परीक्षण करना।
2. वृद्धजनों में मानसिक स्वास्थ्य, विशेषकर अवसाद की व्यापकता तथा उसके सामाजिक-आर्थिक सहसम्बन्धियों का अध्ययन करना।
3. आर्थिक निर्भरता एवं मानसिक स्वास्थ्य के बीच सम्बन्ध की व्याख्या करते हुए इसमें परिवार की बदलती भूमिका का मूल्यांकन करना।

शोध-प्रविधि:

यह अध्ययन पूर्णतः द्वितीयक प्रदत्त तथा प्रकाशित शोध-साहित्य के विश्लेषण पर आधारित है। इसमें किसी उत्तरदाता से प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं किया गया, अतः इसे वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक समीक्षा (descriptive analytical review) की श्रेणी में रखा जा सकता है।

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| Website: https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

प्रदत्त के तीन प्रकार के स्रोत लिए गए। पहला, सरकारी एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की रिपोर्टें, जिनमें भारत में वृद्धावस्था का अनुदैर्घ्य अध्ययन की प्रथम तरंग (IIPS et al., 2020) तथा इंडिया एजिंग रिपोर्ट 2023 (UNFPA & IIPS, 2023) प्रमुख हैं। दूसरा, इन्हीं राष्ट्रीय प्रदत्त पर आधारित सहकर्मी-समीक्षित शोध-पत्र, जिन्होंने अवसाद, बहुरुग्णता, आवासीय व्यवस्था तथा अन्तर-पीढ़ीगत वित्तीय अन्तरण जैसे विषयों का विश्लेषण किया है। तीसरा, वृद्धावस्था, पारिवारिक तनाव एवं वित्तीय क्षमता से सम्बन्धित वह सैद्धान्तिक साहित्य जो इन आँकड़ों की व्याख्या का ढाँचा देता है।

स्रोतों के चयन में तीन कसौटियाँ रखी गईं : प्रदत्त राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिनिधि हों, आयु-वर्ग साठ वर्ष एवं उससे ऊपर का हो, तथा प्रकाशन सन् 2010 के बाद का हो। जहाँ किसी आँकड़े के विषय में स्रोतों में भिन्नता मिली, वहाँ मापन-पद्धति का अन्तर स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया गया है, क्योंकि अवसाद जैसी अवधारणा में स्व-कथित आधार तथा मापनी-आधारित आकलन के परिणाम काफी भिन्न आते हैं। सन्दर्भ APA सप्तम संस्करण की पद्धति के अनुसार दिए गए हैं।

साहित्य की समीक्षा:

वृद्धावस्था पर भारतीय शोध-साहित्य को मोटे तौर पर तीन धाराओं में देखा जा सकता है, और तीनों इस अध्ययन के प्रश्न से जुड़ती हैं।

1. आर्थिक सुरक्षा एवं निर्भरता:

राजन, मिश्रा एवं शर्मा (1999) ने बहुत पहले यह प्रश्न रखा था कि भारत का वृद्ध होना भार है अथवा चुनौती, और उत्तर दिया था कि यह इस पर निर्भर करेगा कि वृद्ध व्यक्ति अपने परिवार के भीतर आर्थिक हैसियत बचा पाता है या नहीं। भट्ट एवं ध्रुवराजन (2001) ने आगे चलकर चेताया कि अन्तर-पीढ़ीगत दायित्व की वाक्पटुता भारत में प्रायः अपने अनुभवजन्य आधार से आगे निकल जाती है। इन चेतावनियों को राष्ट्रीय प्रदत्त ने बाद में काफी हद तक सही ठहराया। संगठित क्षेत्र की पेंशन का दायरा भारतीय वृद्ध जनसंख्या के एक छोटे अंश तक सीमित है, और शेष के लिए आय का स्रोत या तो निरन्तर श्रम है, या सन्तानों से मिलने वाला अनियमित सहयोग, या फिर सार्वजनिक वृद्धावस्था पेंशन की वह राशि जिसे निर्वाह-योग्य नहीं कहा जा सकता (IIPS et al., 2020)।

इस चित्र का एक और पहलू श्रम से जुड़ा है। भारतीय वृद्धजनों का एक बड़ा भाग सेवानिवृत्त नहीं होता, क्योंकि सेवानिवृत्ति उसी के लिए सम्भव है जिसके पास सेवानिवृत्ति के बाद की आय हो। कृषि, दिहाड़ी मजदूरी तथा छोटे स्वरोजगार में लगे वृद्धजन शरीर के साथ देने तक काम करते रहते हैं, और जिस दिन शरीर साथ छोड़ता है उसी दिन आय भी समाप्त हो जाती है। इस प्रकार वृद्धावस्था में आय की समाप्ति कोई नियोजित घटना नहीं, बल्कि स्वास्थ्य के ह्रास का आकस्मिक परिणाम होती है। यही कारण है कि भारतीय वृद्धजनों में आर्थिक असुरक्षा तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी असुरक्षा को अलग करके देखना कठिन है; व्यवहार में दोनों एक ही अनुभव के दो नाम हैं।

इस निर्भरता का एक लैंगिक पक्ष भी है जिसे प्रायः दबा दिया जाता है। वृद्ध स्त्रियों के विधवा होने की सम्भावना अधिक होती है, सम्पत्ति पर उनका नाम कम चढ़ा होता है, और उन्होंने प्रायः जीवन भर अवैतनिक

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| Website: https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

घरेलू श्रम किया होता है, जिसका कोई सेवानिवृत्ति-लाभ नहीं बनता। परिणामस्वरूप आर्थिक रूप से स्वतंत्र वृद्ध स्त्रियों का अनुपात पुरुषों की तुलना में बहुत कम रहता है। यह असमानता आगे चलकर मानसिक स्वास्थ्य के आँकड़ों में भी झलकती है।

2. मानसिक स्वास्थ्य:

वृद्धजनों के मानसिक स्वास्थ्य पर भारत में पर्याप्त काम पिछले एक दशक में ही हुआ है, और उसका अधिकांश राष्ट्रीय अनुदैर्घ्य अध्ययन के उपलब्ध होने के बाद का है। अंसारी, आनन्द एवं हुसैन (2022) ने CES-D-10 मापनी के आधार पर साठ वर्ष से ऊपर के 31,464 उत्तरदाताओं के विश्लेषण में अवसाद की व्यापकता लगभग 29 प्रतिशत पाई, जिसमें पुरुषों का अनुपात 26.2 प्रतिशत तथा स्त्रियों का 31.4 प्रतिशत था। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि स्व-कथन पर आधारित अनुमान इससे काफी कम आते हैं, क्योंकि भारतीय सामाजिक परिवेश में मानसिक कष्ट को रोग के रूप में स्वीकार करने की प्रवृत्ति सीमित है। मापन-पद्धति का यह अन्तर अपने आप में एक निष्कर्ष है : वृद्धजनों का एक बड़ा भाग ऐसे अवसाद के साथ जी रहा है जिसका न निदान हुआ है और न जिसे वे स्वयं रोग मानते हैं।

इसी अध्ययन का दूसरा निष्कर्ष यह था कि बहुरुग्णता तथा अवसाद के बीच का सम्बन्ध सीधा नहीं, बल्कि कार्यात्मक स्वास्थ्य के माध्यम से बनता है, अर्थात् स्व-आकलित स्वास्थ्य, नींद की गुणवत्ता तथा दैनिक कार्यों में आने वाली कठिनाई इसमें मध्यस्थ की भूमिका निभाती हैं (Ansari et al., 2022)। यह निष्कर्ष इस अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह दिखाता है कि वृद्धावस्था में मानसिक स्वास्थ्य किसी एक कारण से नहीं, बल्कि कारणों की एक शृंखला से तय होता है, जिसमें आर्थिक स्थिति एक कड़ी है।

चौहान, कुमार एवं पटेल (2021) ने आवासीय व्यवस्था तथा अवसादजन्य लक्षणों के ग्रामीण-शहरी अन्तर की जाँच की और पाया कि किसके साथ रहा जा रहा है, यह बात मानसिक स्वास्थ्य के लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कहाँ रहा जा रहा है। अग्रवाल (2012) तथा सामन्त, चेन एवं वैनमैन (2015) के पूर्ववर्ती विश्लेषण भी इसी ओर संकेत करते हैं कि अकेले रहने वाले वृद्धजनों की स्थिति सह-निवास करने वालों से खराब रहती है, यद्यपि सह-निवास का लाभ सर्वत्र एक-सा नहीं होता।

3. परिवार की बदलती भूमिका:

तीसरी धारा उस मान्यता की जाँच करती है कि भारतीय परिवार वृद्धजनों के लिए पर्याप्त सुरक्षा-कवच है। नागरगोजे, दिलीप एवं जेम्स (2023) ने राष्ट्रीय प्रदत्त के आधार पर पाया कि सन्तानों से वृद्ध माता-पिता की ओर होने वाला वित्तीय अन्तरण 13.1 प्रतिशत प्रकरणों में हुआ, जबकि माता-पिता से सन्तानों की ओर होने वाला अन्तरण 4.4 प्रतिशत में। पहली दृष्टि में यह अनुपात परिवार के पक्ष में दिखता है, किन्तु इसका दूसरा पाठ अधिक महत्त्वपूर्ण है : लगभग सात में से छह वृद्ध माता-पिता को सन्तानों से कोई प्रत्यक्ष वित्तीय अन्तरण नहीं मिलता। पारिवारिक सहयोग की जो छवि नीतिगत विमर्श में चलती है, उसे इस आँकड़े के साथ मिलाकर देखना चाहिए।

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| Website: https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

उगरगोल एवं बेली (2018) ने केरल के प्रवासी परिवारों के अध्ययन में एक और महत्त्वपूर्ण भेद की ओर ध्यान खींचा, कि संयुक्त परिवार की औपचारिक संरचना और उसके भीतर वास्तव में उपलब्ध देखभाल दो अलग बातें हो सकती हैं। जिन क्षेत्रों से युवाओं का पलायन अधिक है, वहाँ अभिलेख में संयुक्त दिखने वाला परिवार व्यवहार में वृद्ध दम्पत्ति तक सिमट चुका होता है। पारिवारिक तनाव के सैद्धान्तिक ढाँचे में हिल (1958) की यह स्थापना यहाँ प्रासंगिक हो जाती है कि तनाव न तो घटना में निहित होता है और न व्यक्ति में, बल्कि माँग तथा उपलब्ध साधन के अनुपात में उत्पन्न होता है। पर्लिन एवं सहयोगियों (1990) ने आगे दिखाया कि परिवार के भीतर के दबाव भूमिका-संघर्ष तथा क्षीण होती आत्म-संकल्पना के माध्यम से फैलते हैं। वृद्ध व्यक्ति की घटती आर्थिक हैसियत ठीक ऐसा ही एक भूमिका-परिवर्तन है।

4. वित्तीय क्षमता एवं वृद्धजनों की भेद्यता:

चौथी धारा भारत में लगभग अनुपस्थित है और मुख्यतः पाश्चात्य नैदानिक साहित्य से आती है, किन्तु उसका महत्त्व भारतीय सन्दर्भ में कम नहीं। मार्सन एवं सहयोगियों (2000) ने दिखाया कि धन का प्रबन्धन करने की क्षमता एक पृथक् दक्षता-क्षेत्र है जो अन्य अनेक क्षमताओं की तुलना में पहले क्षीण होती है, और यह क्षय उन स्पष्ट लक्षणों के प्रकट होने से बहुत पहले आरम्भ हो जाता है जो सामान्यतः ध्यान खींचते हैं। विडेरा एवं सहयोगियों (2011) ने चिकित्सकों के लिए इसका व्यावहारिक अर्थ स्पष्ट किया, कि वित्तीय कठिनाई प्रायः संज्ञानात्मक ह्रास का पहला दृश्य संकेत होती है।

इस क्षय का एक गम्भीर परिणाम शोषण के प्रति भेद्यता है। लिचटेनबर्ग एवं सहयोगियों (2015) ने अपनी मापनी में बौद्धिक कारकों के साथ-साथ परिस्थितिजन्य कारकों को भी सम्मिलित किया, विशेषकर यह कि निर्णय लेते समय व्यक्ति पर किसी का अनुचित प्रभाव तो नहीं था। भारतीय परिवेश में यह प्रश्न सामान्यतः पूछा ही नहीं जाता, क्योंकि यहाँ वृद्ध का धन परिवार का धन मान लिया जाता है, और सम्पत्ति का हस्तान्तरण प्रायः जीवनकाल में ही अनौपचारिक रूप से हो जाता है। जब तक सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण रहते हैं तब तक इससे कठिनाई नहीं होती; कठिनाई तब आती है जब वृद्ध व्यक्ति सम्पत्ति भी हस्तान्तरित कर चुका हो और सन्तानें देखभाल से हाथ खींच लें। भरण-पोषण अधिनियम, 2007 का प्रावधान ठीक ऐसी ही परिस्थितियों को ध्यान में रखकर बना था, जो स्वयं इस बात का प्रमाण है कि यह परिस्थिति विरल नहीं है।

लुसार्डी एवं मिचेल (2014) ने तुलनात्मक प्रदत्त के आधार पर वित्तीय साक्षरता की तीव्र आयु-प्रवणता का प्रलेखन किया। भारतीय वृद्ध जनसंख्या के एक बड़े भाग की औपचारिक शिक्षा सीमित रही है और बैंकिंग से उसका परिचय जीवन के उत्तरार्ध में हुआ है। डिजिटल भुगतान की ओर तेजी से बढ़ती व्यवस्था में यह अन्तर और चौड़ा हो सकता है, क्योंकि जिस पीढ़ी ने नकद में लेन-देन सीखा, उससे अब मोबाइल के माध्यम से पेंशन निकालने की अपेक्षा की जा रही है। यह प्रश्न भारतीय शोध में अभी लगभग अछूता है और तत्काल ध्यान की माँग करता है।

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| Website: https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

5. शोध की रिक्ति:

उपर्युक्त चारों धाराओं को एक साथ पढ़ने पर एक स्पष्ट रिक्ति दिखाई देती है। आर्थिक सुरक्षा पर लिखने वाले प्रायः मानसिक स्वास्थ्य को अपने विश्लेषण में नहीं लेते, और मानसिक स्वास्थ्य पर लिखने वाले आर्थिक स्थिति को एक नियंत्रण-चर से अधिक महत्त्व नहीं देते। परिणामस्वरूप यह प्रश्न अनुत्तरित रह जाता है कि दोनों के बीच सम्बन्ध किस मार्ग से बनता है। इसके अतिरिक्त उपलब्ध राष्ट्रीय प्रदत्त आय, सम्पत्ति तथा अन्तरण को तो मापते हैं, किन्तु यह नहीं मापते कि घर के भीतर आर्थिक निर्णय कौन लेता है। जब तक यह पक्ष मापा नहीं जाएगा, तब तक निर्भरता के उस रूप का आकलन सम्भव नहीं होगा जिसका मानसिक स्वास्थ्य पर सम्भवतः सबसे गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रस्तुत शोध-पत्र उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर इस रिक्ति को रेखांकित करता है और आगामी क्षेत्र-अध्ययनों के लिए इसे एक कार्य-बिन्दु के रूप में प्रस्तुत करता है।

विश्लेषण एवं विवेचन:

1. आर्थिक निर्भरता का स्वरूप:

तालिका 1 भारत की वृद्ध जनसंख्या की रूपरेखा प्रस्तुत करती है। इसमें ध्यान देने योग्य बात कुल संख्या से अधिक वृद्धि की गति है। जिस देश में साठ वर्ष से ऊपर की जनसंख्या तीन दशकों में दुगुनी हो जाए और अस्सी वर्ष से ऊपर की जनसंख्या लगभग चार गुनी, वहाँ आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था को उसी अनुपात में विस्तार पाना चाहिए था। ऐसा नहीं हुआ।

तालिका 1 : भारत की वृद्ध जनसंख्या की रूपरेखा

सूचक	2011	2022	2036 (अनुमान)	2050 (अनुमान)
60+ जनसंख्या (करोड़ में)	10.3	14.9	22.7	34.7
कुल जनसंख्या में अनुपात (%)	8.6	10.5	15.0	20.8
वृद्धावस्था निर्भरता अनुपात (%)	14.2	लगभग 16	लगभग 22	उच्चतर

स्रोत : UNFPA & IIPS (2023) तथा जनगणना 2011 पर आधारित। 2036 एवं 2050 के मान प्रक्षेपित हैं।

उपलब्ध साक्ष्य के अनुसार आर्थिक निर्भरता भारतीय वृद्धावस्था की अपवाद-स्थिति नहीं, बल्कि सामान्य स्थिति है। संगठित क्षेत्र की अंशदायी पेंशन उस श्रमशक्ति तक ही पहुँचती है जो कुल श्रमशक्ति का दसवाँ भाग भी नहीं है, और शेष के लिए बचती है इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, जिसमें केन्द्र का अंशदान साठ से उन्यासी वर्ष की आयु तक दो सौ रुपये मासिक तथा उसके बाद पाँच सौ रुपये मासिक रहा है। राज्य इसमें अपनी ओर से राशि जोड़ सकते हैं, किन्तु मूल केन्द्रीय राशि इतनी है कि उसे आय कहना कठिन है। इस राशि से न दवा आती है, न पौष्टिक आहार, और न ही वह न्यूनतम स्वायत्तता जिसकी चर्चा सेन (1999) करते हैं।

इस स्थिति का सबसे प्रत्यक्ष परिणाम यह है कि वृद्ध व्यक्ति की आय का वास्तविक स्रोत परिवार बन जाता है। किन्तु यहीं वह विरोधाभास है जिसकी ओर तालिका 2 संकेत करती है। नागरगोजे एवं सहयोगियों (2023) के विश्लेषण में सन्तानों से माता-पिता की ओर वित्तीय अन्तरण केवल 13.1 प्रतिशत प्रकरणों में पाया गया। अर्थात् परिवार को आय का स्रोत मान तो लिया गया है, पर अधिकांश प्रकरणों में वह अन्तरण किसी नियमित एवं मापने योग्य रूप में होता ही नहीं। जो सहयोग मिलता है वह प्रायः वस्तु-रूप में, अनियमित और सर्वथा अनौपचारिक होता है, जिस पर वृद्ध व्यक्ति का कोई दावा नहीं बनता।

तालिका 2 : आर्थिक निर्भरता एवं मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित प्रमुख द्वितीयक निष्कर्ष

पक्ष	प्रमुख निष्कर्ष	स्रोत
अवसाद की व्यापकता (60+)	मापनी-आधारित (CES-D-10) आकलन में लगभग 29%; पुरुष 26.2%, स्त्री 31.4% (N = 31,464)	Ansari et al. (2022)
अन्तर-पीढ़ीगत वित्तीय अन्तरण	सन्तान से माता-पिता की ओर 13.1% प्रकरणों में; माता-पिता से सन्तान की ओर 4.4% में	Nagargoje et al. (2023)
आवासीय व्यवस्था का प्रभाव	अकेले रहने वाले वृद्धजनों में अवसादजन्य लक्षण अधिक; ग्रामीण-शहरी अन्तर उल्लेखनीय	Chauhan et al. (2021); Agrawal (2012)
सार्वजनिक वृद्धावस्था पेंशन	IGNOAPS में केन्द्रीय अंशदान 60-79 वर्ष पर रु. 200 मासिक तथा 80+ पर रु. 500 मासिक	IIPS et al. (2020)
परिवार की वास्तविक भूमिका	घोषित संयुक्त संरचना तथा उपलब्ध देखभाल में अन्तर, विशेषकर उच्च पलायन वाले क्षेत्रों में	Ugargol & Bailey (2018)

टिप्पणी : सभी निष्कर्ष साठ वर्ष एवं उससे अधिक आयु-वर्ग से सम्बन्धित हैं। पूर्ण विवरण सन्दर्भ सूची में देखें।

इस सन्दर्भ में एक तुलना उपयोगी होगी। जिन देशों में वृद्धावस्था पेंशन सार्वभौमिक है, वहाँ वृद्ध व्यक्ति की आय उसके नाम पर आती है और उसी के खाते में जाती है, चाहे राशि बहुत बड़ी न हो। भारत में स्थिति इससे भिन्न है, क्योंकि यहाँ बड़ी संख्या में वृद्धजनों की आय या तो है ही नहीं, या है तो उस पर उनका व्यावहारिक नियंत्रण नहीं है। अन्तर राशि का उतना नहीं जितना स्वामित्व का है। एक हजार रुपये जो वृद्ध व्यक्ति के अपने खाते में आते हैं, उसके पारिवारिक स्थान पर वैसा प्रभाव डालते हैं जैसा पाँच हजार रुपये नहीं डालते यदि वे पुत्र के हाथ से मिलें। यह भेद आँकड़ों में कठिनाई से पकड़ में आता है, किन्तु वृद्ध व्यक्ति के दैनिक अनुभव में यही सबसे बड़ा भेद है।

यहाँ निर्भरता के दो रूपों में भेद करना उपयोगी होगा। पहला रूप संसाधन की कमी है, जिसमें घर में धन ही पर्याप्त नहीं है। दूसरा रूप निर्णय-अधिकार का क्षरण है, जिसमें धन उपलब्ध तो है पर उसके विषय में वृद्ध व्यक्ति

से नहीं पूछा जाता। नीतिगत विमर्श लगभग पूरी तरह पहले रूप पर केन्द्रित रहता है, जबकि मानसिक स्वास्थ्य पर दूसरे रूप का प्रभाव कहीं अधिक प्रत्यक्ष है। लिचटेनबर्ग एवं सहयोगियों (2015) की मापनी इसी कारण महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वह यह पूछती है कि निर्णय लेते समय व्यक्ति पर किसी का अनुचित प्रभाव तो नहीं था, और क्या वह परिणामों को समझ रहा था। भारतीय परिवेश में यह प्रश्न विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहाँ वृद्ध का बैंक खाता प्रायः पुत्र संचालित करता है और पेंशन की राशि उसी के हाथ में पहुँचती है।

2. मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति:

तालिका 2 का दूसरा भाग मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित है। अंसारी एवं सहयोगियों (2022) द्वारा मापनी-आधारित आकलन में अवसाद की व्यापकता लगभग 29 प्रतिशत निकली। यह आँकड़ा अपने आप में गम्भीर है, किन्तु उससे अधिक गम्भीर वह अन्तर है जो मापनी-आधारित आकलन और स्व-कथन के बीच मिलता है। जब वृद्धजनों से सीधे पूछा जाता है कि क्या उन्हें अवसाद है, तो स्वीकार करने वालों का अनुपात बहुत कम रह जाता है। इस अन्तर की व्याख्या दो प्रकार से की जा सकती है, और सम्भवतः दोनों ही सही हैं। एक ओर मानसिक रोग से जुड़ा सामाजिक कलंक स्वीकारोक्ति को रोकता है; दूसरी ओर वृद्धजन स्वयं उदासी, नींद न आना तथा जीवन में रुचि का समाप्त होना, इन सबको वृद्धावस्था का स्वाभाविक अंग मान लेते हैं, रोग नहीं। जब कष्ट को सामान्य मान लिया जाए, तो उपचार का प्रश्न ही नहीं उठता।

लैंगिक अन्तर यहाँ लगातार दिखाई देता है। उपर्युक्त अध्ययन में स्त्रियों में अवसाद की व्यापकता 31.4 प्रतिशत तथा पुरुषों में 26.2 प्रतिशत पाई गई। यह अन्तर अकेला नहीं खड़ा है, क्योंकि वृद्ध स्त्रियों में विधवापन की दर अधिक है, आर्थिक स्वतंत्रता कम है, और शिक्षा का स्तर भी उस पीढ़ी में पुरुषों से नीचा रहा है। तीनों बातें एक ही दिशा में काम करती हैं। इसी प्रकार ग्रामीण एवं शहरी वृद्धजनों के बीच का अन्तर भी अध्ययनों में बार-बार आया है, यद्यपि उसकी दिशा मापन-पद्धति के अनुसार बदलती रही है, जो स्वयं इस बात का संकेत है कि इस क्षेत्र में मानकीकृत मापन की आवश्यकता है।

अनिदानित अवसाद की समस्या को व्यवस्थागत पक्ष से भी देखना चाहिए। भारत में प्रति लाख जनसंख्या पर मनोचिकित्सकों की संख्या एक से भी कम है, और जो हैं वे मुख्यतः महानगरों तथा बड़े नगरों में केन्द्रित हैं। ग्रामीण क्षेत्र के वृद्ध व्यक्ति के लिए, जिसके पास न स्वयं का धन है और न अकेले यात्रा करने की क्षमता, मनोचिकित्सक तक पहुँचना व्यावहारिक रूप से असम्भव के निकट है। ऐसी स्थिति में अवसाद का अनिदानित रह जाना व्यक्ति की उपेक्षा का नहीं, व्यवस्था की अनुपलब्धता का परिणाम है।

यहाँ एक पद्धतिगत सावधानी भी आवश्यक है। विभिन्न अध्ययनों में अवसाद के आकलन के लिए भिन्न-भिन्न मापनियाँ प्रयुक्त हुई हैं, और उनके परिणाम स्वाभाविक रूप से भिन्न आते हैं। जो अध्ययन CES-D-10 अथवा CIDI-SF जैसी मापनियों का प्रयोग करते हैं वे उच्च व्यापकता बताते हैं, जबकि स्व-कथन पर आधारित अनुमान बहुत नीचे रहते हैं। इन आँकड़ों की

सीधी तुलना करना भ्रामक होगा। उचित यही है कि प्रत्येक आँकड़े को उसकी मापन-पद्धति के साथ पढ़ा जाए, और निष्कर्ष व्यापकता के सटीक अंक से नहीं बल्कि उसके परिमाण-क्रम तथा उपसमूहों के बीच के अन्तर से निकाला जाए। इसी कारण प्रस्तुत विश्लेषण में लैंगिक तथा क्षेत्रीय अन्तरों पर अधिक बल दिया गया है, न कि किसी एक व्यापकता-अंक पर।

3. आर्थिक निर्भरता एवं मानसिक स्वास्थ्य का सम्बन्ध:

अब मूल प्रश्न पर आते हैं। उपलब्ध साक्ष्य से यह सम्बन्ध किस प्रकार बनता है?

पहली कड़ी सीधी है। आय की अनिश्चितता स्वयं एक दीर्घकालिक तनावकारक है। जिस व्यक्ति को यह नहीं पता कि अगले महीने दवा का खर्च कहाँ से आएगा, उसके लिए चिंता कोई प्रासंगिक भाव नहीं बल्कि स्थायी अवस्था बन जाती है। हिल (1958) के ढाँचे में कहें तो माँग और साधन का अनुपात यहाँ स्थायी रूप से प्रतिकूल रहता है, और तनाव उसी अनुपात से उत्पन्न होता है।

दूसरी कड़ी अधिक सूक्ष्म है और सम्भवतः अधिक महत्त्वपूर्ण भी। आर्थिक निर्भरता घर के भीतर वृद्ध व्यक्ति की भूमिका बदल देती है। जो व्यक्ति कल तक परिवार का निर्णायक था, वह अब अनुमति माँगने की स्थिति में आ जाता है। पर्लिन एवं सहयोगियों (1990) ने भूमिका-संघर्ष तथा क्षीण होती आत्म-संकल्पना को तनाव के फैलने का मुख्य मार्ग बताया था, और वृद्धावस्था में आने वाला यह परिवर्तन ठीक उसी प्रकार का है। यहाँ कष्ट का कारण अभाव नहीं, बल्कि हैसियत का ह्रास है। यही कारण है कि सम्पन्न परिवारों के वृद्धजन भी अवसादग्रस्त पाए जाते हैं, जिसे केवल आय के आँकड़ों से नहीं समझाया जा सकता।

तीसरी कड़ी स्वास्थ्य के माध्यम से बनती है। अंसारी एवं सहयोगियों (2022) ने दिखाया कि बहुरुग्णता का प्रभाव अवसाद पर कार्यात्मक स्वास्थ्य के माध्यम से पहुँचता है। आर्थिक निर्भरता इस शृंखला में पहले ही चरण पर हस्तक्षेप करती है, क्योंकि जिस वृद्ध के पास अपना धन नहीं है वह उपचार टालता है, दवा अनियमित लेता है और पौष्टिक आहार में कटौती करता है। इससे रुग्णता बढ़ती है, कार्यक्षमता घटती है और अवसाद की सम्भावना और प्रबल हो जाती है। इस प्रकार आर्थिक स्थिति मानसिक स्वास्थ्य को दो मार्गों से प्रभावित करती है, एक सीधे मनोवैज्ञानिक मार्ग से और दूसरा शारीरिक स्वास्थ्य के घुमावदार मार्ग से।

चौथी कड़ी सामाजिक है। आर्थिक निर्भरता वृद्ध व्यक्ति के सामाजिक जीवन को भी सिकोड़ती है। विवाह, त्योहार तथा अन्य सामाजिक अवसरों पर कुछ भी देने की स्थिति में न होना धीरे-धीरे उन अवसरों से दूरी बना देता है, और इस प्रकार वह सामाजिक संजाल कमजोर पड़ जाता है जो वृद्धावस्था में मानसिक स्वास्थ्य का सबसे बड़ा सहारा होता है। भारतीय समाज में पारस्परिक लेन-देन सम्बन्ध बनाए रखने का माध्यम रहा है; जो उसमें भाग नहीं ले सकता, वह क्रमशः बाहर होता चला जाता है। यह प्रक्रिया मौन होती है और आँकड़ों में शायद ही दर्ज होती है, किन्तु इसका मनोवैज्ञानिक भार भारी है।

यह भी सम्भव है कि सम्बन्ध की दिशा उलटी हो, अर्थात् अवसादग्रस्त वृद्ध व्यक्ति आर्थिक निर्णयों से स्वयं हटता चला जाए और इस प्रकार निर्भरता बढ़ती जाए।

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| Website: https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

द्वितीयक अनुप्रस्थ-काट प्रदत्त के आधार पर इन दोनों दिशाओं में निर्णय करना सम्भव नहीं है, और ईमानदारी इसी में है कि इसे खुला प्रश्न माना जाए। अनुदैर्घ्य अध्ययन की आगामी तरंगें इस विषय पर अधिक स्पष्ट उत्तर दे सकेंगी।

उपर्युक्त चारों कड़ियों को एक साथ रखने पर वह चित्र बनता है जो तालिका 3 में संक्षेप में दिया गया है। इसमें उन प्रमुख कारकों को सूचीबद्ध किया गया है जिनका सम्बन्ध वृद्धजनों के मानसिक स्वास्थ्य से साहित्य में बार-बार सामने आया है, उस सम्बन्ध की दिशा, तथा वह सम्भावित तंत्र जिसके माध्यम से वह कार्य करता है। यह तालिका किसी एक अध्ययन का परिणाम नहीं, बल्कि समीक्षित साहित्य का संश्लेषण है, अतः इसे परिकल्पनाओं के समुच्चय के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, सिद्ध निष्कर्षों के रूप में नहीं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि इनमें से अधिकांश कारक आपस में जुड़े हुए हैं। विधवा स्त्री के अकेले रहने की सम्भावना अधिक है, अकेले रहने वाले की आर्थिक निर्भरता प्रायः अधिक है, और निर्भर व्यक्ति उपचार में कटौती करके बहुरुग्णता को बढ़ने देता है। इस प्रकार ये पृथक् जोखिम-कारक नहीं, बल्कि एक ही शृंखला की कड़ियाँ हैं, और नीतिगत हस्तक्षेप को इस शृंखला के आरम्भिक बिन्दु पर लगना चाहिए, अन्तिम पर नहीं।

तालिका 3: वृद्धजनों के मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित प्रमुख कारक एवं सम्भावित तंत्र

कारक	मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्ध	सम्भावित तंत्र
आर्थिक निर्भरता	ऋणात्मक	आय की अनिश्चितता; घर के भीतर निर्णय-अधिकार का क्षरण
विधवापन	ऋणात्मक	जीवनसाथी के रूप में सामाजिक सहारे की हानि; आर्थिक असुरक्षा में वृद्धि
अकेला निवास	ऋणात्मक	एकाकीपन; दैनिक देखभाल का अभाव; संकट में तत्काल सहायता की अनुपलब्धता
बहुरुग्णता	ऋणात्मक	कार्यात्मक क्षमता में ह्रास; उपचार-व्यय का भार; नींद एवं पीड़ा की समस्या
शैक्षिक स्तर	धनात्मक	स्वास्थ्य-साक्षरता; बेहतर रोजगार-इतिहास तथा बचत की सम्भावना
नियमित पेंशन अथवा स्वयं की आय	धनात्मक	आय की निश्चितता; परिवार में सौदेबाजी की स्थिति का बना रहना
शहरी निवास	मिश्रित	सेवाओं तक पहुँच बेहतर, किन्तु पारम्परिक सामाजिक संजाल अपेक्षाकृत कमजोर

टिप्पणी : समीक्षित साहित्य के आधार पर संश्लेषित। ऋणात्मक का अर्थ है कारक की उपस्थिति या तीव्रता बढ़ने पर मानसिक स्वास्थ्य का गिरना।

4. परिवार की भूमिका:

अन्तिम प्रश्न परिवार का है। भारतीय नीतिगत ढाँचा वृद्धजनों की देखभाल का उत्तरदायित्व मुख्यतः परिवार पर छोड़ता आया है, और माता-पिता एवं वरिष्ठ नागरिक भरण-पोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 ने इसे विधिक दायित्व का रूप भी दे दिया (Government of India, 2007)। किन्तु किसी दायित्व को विधि में लिख देने से वह संसाधन नहीं बन जाता।

एक प्रश्न यहाँ स्वाभाविक रूप से उठता है : क्या भारतीय परिवार वृद्धजनों के प्रति उदासीन होता जा रहा है? उपलब्ध साक्ष्य इस निष्कर्ष का समर्थन नहीं करते। सह-निवास की दर आज भी बहुत ऊँची है और अधिकांश वृद्धजन सन्तानों के साथ ही रहते हैं। जो बदला है वह भावना नहीं, क्षमता है। जिस सन्तान का स्वयं का रोजगार अनिश्चित है, जो किराए के मकान में दूसरे शहर में रह रही है और जिस पर अपने बच्चों की शिक्षा का भार है, उससे माता-पिता के लिए नियमित वित्तीय अन्तरण की अपेक्षा करना यथार्थ नहीं। इसलिए समस्या को नैतिक पतन के रूप में प्रस्तुत करना, जैसा सार्वजनिक विमर्श में प्रायः होता है, न केवल अनुचित है बल्कि दिशाभ्रामक भी, क्योंकि उससे समाधान की खोज गलत दिशा में मुड़ जाती है।

साक्ष्य यह सुझाते हैं कि परिवार का सहारा वास्तविक तो है, पर असमान एवं अनिश्चित है। वह उन्हीं वृद्धजनों तक पर्याप्त रूप से पहुँचता है जिनकी सन्तानें आर्थिक रूप से सक्षम हैं और निकट रहती हैं। जहाँ पलायन हुआ है, जहाँ सन्तानें स्वयं अनिश्चित रोजगार में हैं, अथवा जहाँ वृद्ध व्यक्ति विधवा स्त्री है, वहाँ यह सहारा पतला पड़ जाता है। उगरगोल एवं बेली (2018) का यह प्रेक्षण कि परिवार की घोषित संरचना और उसमें उपलब्ध वास्तविक देखभाल भिन्न हो सकती है, नीति-निर्माण के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों में से एक है।

इसका अर्थ यह नहीं कि परिवार की भूमिका घट गई है। अर्थ यह है कि परिवार को सार्वजनिक व्यवस्था का विकल्प मानना गलत है। जिन समाजों में वृद्धावस्था पेंशन व्यापक है, वहाँ भी परिवार देखभाल करता है; अन्तर केवल इतना है कि वहाँ वह देखभाल स्नेह के कारण होती है, विवशता के कारण नहीं। जब वृद्ध व्यक्ति के पास अपनी आय होती है तो परिवार के भीतर उसका सम्बन्ध भी बदल जाता है, क्योंकि तब वह याचक नहीं रहता। यही वह बिन्दु है जहाँ आर्थिक नीति और मानसिक स्वास्थ्य एक-दूसरे से मिलते हैं।

5. क्षेत्रीय एवं ग्रामीण-शहरी विषमता:

अब तक की चर्चा राष्ट्रीय औसतों पर आधारित रही है, किन्तु भारत जैसे देश में औसत प्रायः वास्तविकता को छिपा देता है। वृद्धावस्था का अनुभव केरल तथा तमिलनाडु में, जहाँ जनसांख्यिकीय संक्रमण पहले पूरा हुआ और जहाँ सामाजिक सुरक्षा का ढाँचा अपेक्षाकृत विकसित है, बिहार तथा उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों से बहुत भिन्न है। दक्षिणी राज्यों में वृद्धजनों का अनुपात राष्ट्रीय औसत से ऊँचा है, किन्तु वहाँ पेंशन-कवरेज तथा स्वास्थ्य-सुविधाएँ भी बेहतर हैं। इसके विपरीत उत्तरी-पूर्वी मैदानी राज्यों में वृद्धजनों का अनुपात अभी कम है, पर वहाँ प्रति वृद्ध उपलब्ध संसाधन उससे भी कम हैं। इस प्रकार जिन राज्यों के पास तैयारी का समय अधिक है, वहीं तैयारी सबसे कमजोर है।

ग्रामीण एवं शहरी अन्तर इससे भी अधिक प्रत्यक्ष है। नगर में बैंक, डाकघर, पेंशन-वितरण केन्द्र तथा चिकित्सा सुविधाएँ पहुँच के भीतर होती हैं; गाँव में इनमें से प्रत्येक के लिए यात्रा करनी पड़ती है, और यात्रा उस व्यक्ति के लिए कठिन होती है जिसकी गतिशीलता घट चुकी है और जिसके पास किराए का पैसा भी अपना नहीं है। इसका परिणाम यह होता है कि जिन योजनाओं का लाभ ग्रामीण वृद्धजनों को सर्वाधिक मिलना चाहिए, उन्हीं तक उनकी पहुँच सबसे कम रहती है। चौहान एवं सहयोगियों (2021) के विश्लेषण ने आवासीय व्यवस्था के साथ-साथ इस स्थानगत अन्तर को भी रेखांकित किया है।

पलायन इस चित्र में एक और परत जोड़ता है। जिन क्षेत्रों से युवा बड़ी संख्या में बाहर जाते हैं, वहाँ गाँव में रह गए वृद्ध माता-पिता की स्थिति विरोधाभासी हो जाती है। एक ओर उन्हें भेजा हुआ धन मिल सकता है, जिससे आर्थिक स्थिति कुछ सुधरती है; दूसरी ओर दैनिक देखभाल करने वाला कोई नहीं बचता, और बीमारी की स्थिति में सहारा दूर होता है। उगरगोल एवं बेली (2018) ने केरल के सन्दर्भ में यही विरोधाभास दिखाया था। आर्थिक सुरक्षा और देखभाल की उपलब्धता, दोनों को एक साथ रखकर देखे बिना वृद्धजनों के कल्याण का आकलन अधूरा रहेगा।

6. नीतिगत ढाँचे की एक संक्षिप्त समीक्षा:

उपर्युक्त विश्लेषण के आलोक में वर्तमान नीतिगत ढाँचे को देखना उपयोगी होगा। वृद्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति, 1999 ने आर्थिक सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा सम्मानपूर्ण जीवन को अपने लक्ष्यों में गिनाया था। वृद्धजनों के स्वास्थ्य की देखभाल का राष्ट्रीय कार्यक्रम जिला अस्पतालों में वृद्धावस्था-चिकित्सा इकाइयाँ स्थापित करने की दिशा में बढ़ा। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय की अटल वयो अभ्युदय योजना विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों को एक छतरी के नीचे लाई। सन् 2024 में आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना का विस्तार करके सत्तर वर्ष एवं उससे अधिक आयु के सभी नागरिकों को आय की शर्त के बिना सम्मिलित किया गया, जो वृद्धजनों की स्वास्थ्य-सुरक्षा की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

इस ढाँचे की दो विशेषताएँ ध्यान खींचती हैं। पहली, स्वास्थ्य के क्षेत्र में हुई प्रगति आय-सुरक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति से कहीं आगे है। उपचार-व्यय का जोखिम अब पहले से कम है, किन्तु दैनिक निर्वाह के लिए नियमित आय की व्यवस्था लगभग वहीं खड़ी है जहाँ दो दशक पहले थी। दूसरी, समूचा ढाँचा सेवाओं के रूप में सोचा गया है, नकद के रूप में नहीं। सेवाएँ आवश्यक हैं, पर वे वृद्ध व्यक्ति की घरेलू सौदेबाजी की स्थिति नहीं बदलतीं। जो व्यक्ति अस्पताल में निःशुल्क उपचार पा लेता है, वह घर लौटकर भी उसी स्थिति में रहता है जहाँ हर छोटे व्यय के लिए उसे किसी और की ओर देखना पड़ता है।

मानसिक स्वास्थ्य इस ढाँचे में सबसे कमजोर कड़ी है। राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम विद्यमान है और मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017 ने अधिकार-आधारित दृष्टिकोण अपनाया, किन्तु वृद्धजनों के लिए विशेष रूप से रचित प्रावधान सीमित हैं। वृद्धावस्था-मनोरोग एक अलग विशेषज्ञता है और भारत में उसके प्रशिक्षित चिकित्सकों की संख्या अत्यन्त कम है। जब तक

Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| Website: https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-3 | July – August – September 2026

प्राथमिक स्वास्थ्य के स्तर पर अवसाद की पहचान करने की व्यवस्था नहीं बनती, तब तक ऊपर के स्तर पर बनी संस्थाएँ उन तक पहुँचेंगी ही नहीं जिन्हें उनकी सर्वाधिक आवश्यकता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव:

इस समीक्षा से तीन निष्कर्ष निकलते हैं।

पहला, भारतीय वृद्धजनों की आर्थिक निर्भरता व्यापक है और वह केवल संसाधन की कमी नहीं, बल्कि निर्णय-अधिकार के क्षरण का भी मामला है। पेंशन का दायरा सीमित है, सार्वजनिक वृद्धावस्था पेंशन की राशि निर्वाह-योग्य नहीं है, और परिवार से मिलने वाला वित्तीय अन्तरण अल्पसंख्यक प्रकरणों तक ही सीमित पाया गया है।

दूसरा, वृद्धजनों में अवसाद की व्यापकता उच्च है और स्त्रियों में अधिक है, किन्तु उसका बड़ा भाग अनिदानित रह जाता है, क्योंकि सामाजिक कलंक तथा इस मान्यता के कारण कि मानसिक कष्ट वृद्धावस्था का स्वाभाविक अंग है, वह चिकित्सा तक पहुँचता ही नहीं।

तीसरा, इन दोनों के बीच का सम्बन्ध बहुमार्गी है। आर्थिक निर्भरता मानसिक स्वास्थ्य को सीधे भी प्रभावित करती है, घर के भीतर भूमिका-परिवर्तन के माध्यम से भी, और उपचार में कटौती तथा बढ़ती रुग्णता के माध्यम से भी। यह जटिलता इस बात का संकेत है कि केवल मनोचिकित्सा बढ़ाकर वृद्धजनों के मानसिक स्वास्थ्य की समस्या हल नहीं होगी।

इन तीनों निष्कर्षों को जोड़ने वाला सूत्र यह है कि वृद्धजनों का मानसिक स्वास्थ्य केवल चिकित्सा का विषय नहीं, वितरण का भी विषय है। घर के भीतर संसाधन किस प्रकार बँटते हैं और निर्णय कौन लेता है, यह प्रश्न उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना यह कि उपचार उपलब्ध है या नहीं। गृह विज्ञान की दृष्टि से यह कोई नई बात नहीं, क्योंकि पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन का समूचा अनुशासन इसी प्रश्न पर टिका है। नया केवल इतना है कि इस दृष्टि को वृद्धावस्था पर लागू करने का प्रयास अभी बहुत कम हुआ है।

अन्त में एक बात दोहराना आवश्यक है। इस शोध-पत्र का तर्क यह नहीं है कि परिवार असफल हो गया है अथवा राज्य को परिवार का स्थान ले लेना चाहिए। तर्क यह है कि दोनों की भूमिकाएँ भिन्न हैं और एक दूसरे का विकल्प नहीं बन सकती। परिवार देखभाल दे सकता है, संगति दे सकता है और वह अपनापन दे सकता है जो किसी संस्था से नहीं मिलता; राज्य नियमित एवं पूर्वानुमेय आय दे सकता है, जो परिवार प्रायः नहीं दे पाता। जब राज्य आय की जिम्मेदारी उठा लेता है तब परिवार की देखभाल पर से आर्थिक बोझ हटता है, और वही सम्बन्ध जो विवशता के कारण तनावपूर्ण हो चला था, फिर से सहज हो सकता है। वृद्धजनों के मानसिक स्वास्थ्य का प्रश्न अन्ततः इसी सन्तुलन पर टिका है।

सुझाव:

- वृद्धावस्था पेंशन की राशि का पुनर्निर्धारण तथा उसका मुद्रास्फीति से जोड़ा जाना आवश्यक है। दो सौ रुपये मासिक की केन्द्रीय राशि प्रतीकात्मक है और उसे आय-सहारा नहीं कहा जा सकता।

- पेंशन एवं अन्य लाभ वृद्ध व्यक्ति के अपने खाते में पहुँचें तथा उसी के द्वारा संचालित हों, यह सुनिश्चित करना उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना राशि बढ़ाना। निर्णय-अधिकार के बिना आय अपना मनोवैज्ञानिक प्रभाव खो देती है।
- वृद्ध स्त्रियों के लिए पृथक् प्रावधान अपेक्षित हैं, क्योंकि विधवापन, सम्पत्ति-अधिकार का अभाव तथा अवैतनिक श्रम का इतिहास मिलकर उन्हें दोहरी वंचना में डालते हैं।
- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तथा स्वास्थ्य-शिविरों में वृद्धजनों की अवसाद-स्क्रीनिंग को नियमित बनाया जाए। यह अल्प-व्ययी है और अनिदानित प्रकरणों को सामने लाने का सबसे व्यावहारिक मार्ग है।
- गृह विज्ञान के पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन एवं मानव विकास पाठ्यक्रमों में वृद्धावस्था की आर्थिक स्वायत्तता को स्वतंत्र विषय के रूप में सम्मिलित किया जाए, ताकि प्रसार-कार्य में लगे विद्यार्थी इस पक्ष के प्रति संवेदनशील बन सकें।

अध्ययन की सीमा:

प्रस्तुत विश्लेषण पूर्णतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, अतः उसकी सीमाएँ उन्हीं स्रोतों की सीमाएँ हैं। जिन प्रदत्त का उपयोग किया गया वे मुख्यतः अनुप्रस्थ-काट प्रकृति के हैं, इसलिए कारण-सम्बन्ध की दिशा निश्चित नहीं की जा सकती। अवसाद के आकलन में विभिन्न अध्ययनों ने भिन्न मापनियाँ प्रयुक्त की हैं, जिससे आँकड़ों की सीधी तुलना कठिन हो जाती है। इसके अतिरिक्त आर्थिक निर्भरता के जो संकेतक उपलब्ध हैं वे मुख्यतः आय एवं अन्तरण से जुड़े हैं, जबकि इस शोध-पत्र का तर्क यह रहा है कि निर्णय-अधिकार का मापन इससे अधिक महत्त्वपूर्ण है। ऐसा मापन राष्ट्रीय स्तर पर अभी उपलब्ध नहीं है, और यही आगामी शोध की सबसे स्पष्ट दिशा भी है।

सन्दर्भ सूची:

1. Agrawal, S. (2012). Effect of living arrangement on the health status of elderly in India: Findings from a national cross sectional survey. *Asian Population Studies, 8*(1), 87-101.
2. Ansari, S., Anand, A., & Hossain, B. (2022). Multimorbidity and depression among older adults in India: Mediating role of functional and behavioural health. *PLOS ONE, 17*(6), e0269646.
3. Bhat, A. K., & Dhruvarajan, R. (2001). Ageing in India: Drifting intergenerational relations, challenges and options. *Ageing & Society, 21*(5), 621-640.
4. Chauhan, S., Kumar, S., & Patel, R. (2021). Does living arrangement predict urban-rural differential in depressive symptoms among older adults in India? A study based on Longitudinal Ageing Study in India survey. *Journal of Population Ageing*.
5. Government of India. (2007). *The Maintenance and Welfare of Parents*

and Senior Citizens Act, 2007. Ministry of Law and Justice.

6. Hill, R. (1958). Generic features of families under stress. *Social Casework, 39*(2-3), 139-150.
7. International Institute for Population Sciences, National Programme for Health Care of Elderly, Harvard T. H. Chan School of Public Health, & University of Southern California. (2020). *Longitudinal Ageing Study in India (LASI) wave 1, 2017-18, India report*. IIPS.
8. Lichtenberg, P. A., Stoltman, J., Ficker, L. J., Iris, M., & Mast, B. (2015). A person-centered approach to financial capacity assessment: Preliminary development of a new rating scale. *Clinical Gerontologist, 38*(1), 49-67.
9. Lusardi, A., & Mitchell, O. S. (2014). The economic importance of financial literacy: Theory and evidence. *Journal of Economic Literature, 52*(1), 5-44.
10. Nagargoje, V., Dilip, T. R., & James, K. S. (2023). Intergenerational financial transfer and family structure in India: Evidence from LASI, 2017-2018. *Innovation in Aging, 7*(Suppl. 1), 559.
11. Pearlin, L. I., Mullan, J. T., Semple, S. J., & Skaff, M. M. (1990). Caregiving and the stress process: An overview of concepts and their measures. *The Gerontologist, 30*(5), 583-594.
12. Rajan, S. I., Mishra, U. S., & Sarma, P. S. (1999). *India's elderly: Burden or challenge?* Sage.
13. Samanta, T., Chen, F., & Vanneman, R. (2015). Living arrangements and health of older adults in India. *The Journals of Gerontology Series B, 70*(6), 937-947.
14. Sen, A. (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.
15. Ugargol, A. P., & Bailey, A. (2018). Family caregiving for older adults: Gendered roles and caregiver burden in emigrant households of Kerala, India. *Asian Population Studies, 14*(2), 194-210.
16. United Nations Population Fund, & International Institute for Population Sciences. (2023). *India ageing report 2023: Caring for our elders - Institutional responses*. UNFPA India.
17. Widera, E., Steenpass, V., Marson, D., & Sudore, R. (2011). Finances in the older patient with cognitive impairment. *JAMA, 305*(7), 698-706.